RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-07
July-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]

शिक्षण के रचनात्मक साधन के रूप में रंगमंच और फ़िल्म

अभिषेक त्रिपाठी

पीएच.डी. शोधार्थी (जुनियर रिसर्च फेलो), प्रदर्शनकारी कला (फ़िल्म एवं रंगमंच) विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र।

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 15 July 2019

Keywords
शिक्षण, रचनात्मकता, रंगमंच, फ़िल्म ।

***Corresponding Author**
Email: pingaakshaa@gmail.com

ABSTRACT

रंगमंच और फ़िल्म अपनी बुनियादी तासीर में मुख्यतः मनोरंजन की विधा हैं। यद्यपि कला का उपयोगितावादी सिद्धांत इसकी (केवल मनोरंजक रूप की) खिलाफ़त करता है और इसके सामाजिक उत्तरदायित्व को सुनिश्चित करता है; परंतु इस दृष्टि को इसमें शामिल कर लेने पर भी इसके मनोरंजक प्रवृत्ति की अनदेखी नहीं की जा सकती ।

वर्तमान शिक्षा पद्धति के व्यावहारिक उद्देश्य पर गौर करें तो एक चीज़ स्पष्ट है कि इसके मूल में आजीविका की सुरक्षा का ध्येय ही सर्वोपरि है; यही कारण है कि शिक्षा समाज में सहायता देने के साथ कुंठा का सबब भी बन रही है (असफलता की स्थिति में)। आर्थिक सुरक्षा की चिंता ने शिक्षा से रचनात्मक अंश को तिरोहित कर दिया है और बच्चे प्राथमिक स्तर से ही अनायास अंक, प्रतिशत के खेल में उलझ कर अपने ज्ञान, समझ और विकास के दायरे को संकुचित करते चले जा रहे हैं।

ऐसी स्थिति में रंगमंच और फ़िल्मों में मौजूद रचनात्मकता, कल्पना की स्वच्छंद उड़ान तथा उसके उपयोगितावादी सिद्धांत के फलतः मनोरंजन के साथ-साथ उसमें समाहित ज्ञान, चेतना,जागरूकता के तत्व शिक्षा में उसके लिए एक स्थान तैयार करते हैं । मूलतः दृश्य विधा होने के नाते इसका प्रभाव मानव मस्तिष्क पर चिरस्थायी होता है। शिक्षा के औपचारिक जटिल ढाँचे से अलग इसके रसास्वादन के वक्त संप्रेषित ज्ञान सहजता के साथ दृष्टा में समझ का एक व्यापक धरातल तैयार कर सकता है। यद्यपि रंगमंच से अलग फ़िल्म अपने नकारात्मक प्रभाव की दृष्टि से भी कुख्यात है और अक्सर मूल्यों की गिरावट के लिए इसे कोसा जाता है; तथापि ऐसी फ़िल्मों की लंबी सूची है जो इसके पक्ष में सकारात्मक माहौल भी बनाती हैं। इस मौजूदा जानकारी से आगे बढ़कर यह अध्ययन रचनात्मक शिक्षा के क्षेत्र में फ़िल्म और रंगमंच की भूमिका को कुछ विशिष्ट नाटक और फ़िल्म के माध्यम से देखने और आँकने की कोशिश करता है। अंतर्वस्तु विश्लेषण के जरिये इस अध्ययन को सम्पन्न किया गया है।

प्रस्तावना-

शिक्षा क्या है? शिक्षा का उद्देश्य क्या है? शिक्षा का तौर-तरीका क्या होना चाहिए? ये तमाम ऐसे सवाल हैं जिनके ठीक और सटीक जवाब बहुत लोगों के पास नहीं हैं। यद्यपि शिक्षा से जुड़े तमाम विद्वतजन निरंतर शिक्षा को सार्थक, अर्थपूर्ण बनाने हेतु प्रयत्नशील हैं। उन्होंने शिक्षा को लेकर तमाम अर्थपूर्ण, प्रासंगिक और बेहद उपयोगी विचार निरंतर प्रस्तुत किए हैं; परंतु यह दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है कि भारत की शिक्षा व्यवस्था अभी भी उतनी प्रभावशाली नहीं हो सकी है, जितनी अपेक्षित है।

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था पर जो सबसे बड़ा दोष मढ़ा जा सकता है, वह है उसमें से निरंतर दूर होती रचनात्मकता का, उसके सिमटते उद्देश्य का...। यह विडंबना है कि जिस शिक्षा पर लोगों को गढ़ने, दबाव से मुक्त कर व्यापक धरातल पर जीने, सोचने-समझने की क्षमता विकसित करने का दायित्व है, वही शिक्षा उन्हें डर, भय, अनिश्चितता, आशंकाओं के बीच डुबाती-उबारती रहती है। शिक्षा सूचनाओं के संग्रह, उसकी प्रस्तुतीकरण तक सिमट कर रह गई है। ज्ञान, समझ, विवेक, धैर्य, रचनात्मकता तिरोहित होता चला जा रहा है और लोग एक बने-बनाए ढर्रे पर चलने के लिए अभिशप्त हैं।

वर्तमान शिक्षा पद्धति के व्यावहारिक पक्ष पर गौर करें तो एक चीज स्पष्ट है कि इसका उद्देश्य अब मनुष्य को गढ़ने की बजाय उन्हें आजीविका कमाने के साधन के इर्द-गिर्द ले जाकर खड़ा कर देना मात्र रह गया है। यही कारण है कि शिक्षा समाज में सहायता देने के साथ कुंठा का सबब भी बन रही है। केवल और केवल आर्थिक सुरक्षा की चिंता ने शिक्षा से रचनात्मक अंश को तिरोहित कर दिया है और बच्चे प्राथमिक स्तर से ही

अनायास अंक, प्रतिशत के खेल में उलझकर अपने ज्ञान, समझ और विकास के दायरे को संकुचित करते चले जा रहे हैं।

स्थिति तब और बदतर हो जाती है जब यह शिक्षा निश्चित आर्थिक सुरक्षा (नौकरी के रूप में) भी नहीं दे पाती और शैक्षणिक संस्थानों में 20-25 वर्ष गुजारने के बाद तैयार वृक्ष (शिक्षित मनुष्य) भी किंकर्तव्यविमूढ़ अवस्था में नजर आते हैं; फलतः युवावस्था में ही अवसाद, कुंठा और न जाने क्या-क्या...! शिक्षा का जो ढाँचा वर्तमान में हमारे समक्ष मौजूद है, वह सूचना तो दे रहा है, पर दृष्टि नहीं। इतिहास के पन्ने पलटकर हम यह तो जान लेते हैं कि अकबर कब पैदा हुआ, उसने कौन-कौन से युद्ध लड़े; पर हम यहीं अटककर रह जाते हैं। यह सूचना हमें ज्ञान की हद तक नहीं ले जा पाती।

शिक्षा व्यवस्था बाजार की गुलाम बनती चली जा रही है। इस बाजारी शिक्षा के फलतः शिक्षित मनुष्य रूपी जो उत्पाद निकल रहा है वह इस बात को तय करने में भी असमर्थ है कि किसकी कीमत पर क्या? लोग स्वयं पड़ताल करने की स्थिति में नहीं हैं; वे वही कर रहे हैं जो भीड़ कर रही है, उसी में अपने हिस्से का आनंद ढूंढ़ रहे हैं। यह सच है कि शिक्षा के उद्देश्य में आर्थिक सुरक्षा का ध्येय होना चाहिए, परंतु सिर्फ वही एक मात्र ध्येय बनकर रह जाए तो शिक्षा के पूरे स्वरूप पर प्रश्नचिह्न खड़ा होना स्वाभाविक है।

जीवन क्या है? जीवन का ध्येय क्या है? आनंद क्या है? आदि प्रश्न, न शिक्षा के केन्द्र में उठ रहे हैं और न ही शिक्षा केंद्र विद्यार्थियों के मन में ऐसे प्रश्न और उसके उत्तर के प्रति जिज्ञासा का भाव पैदाकर पा रहे हैं। यही कारण है कि ऐसी शिक्षा, उसके जरिये सफल घोषित लोगों के जीवन पर बहुत बार विविध प्रकार के प्रश्नचिन्ह लगते हुए भी दिख पड़ते हैं। ऐसे लोग जब जीवन के तमाम व्यावहारिक पक्षों में असफल दिखते हैं, तमाम मानवीय दुर्बलताएं उन्हें भी उसी तरह झकझोरती हैं जैसे अन्य को तो फिर...! बहुधा ऐसा देखा जाता है कि अशिक्षित और अनपढ़ कहे जाने वाले लोग ऐसी जगहों पर शिक्षित कहे जाने वाले लोगों की तुलना में ज्यादा प्रभावी और बुद्धिमान नजर आते हैं। इस संदर्भ में हिंदी के यशस्वी साहित्यकार "सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय" की अधोलिखित पंक्तियों को उद्धृत करना उचित है-

"साक्षर समझे जाने वाले नागर समुदाय में अनेक अशिक्षित को देखा है। निरक्षर समझे जाने वाले ग्रामीण समुदाय में अनेक शिक्षित को देखा है।"

आज की शिक्षा मानव मूल्यों, समाज के प्रति समर्पण, सेवाभाव और पर्यावरण की चिंता से दूर कवेल अर्थ या धन की कामना से, उपभोग की अनंत लिप्सा से और सब कुछ पर नियंत्रण पाने की उद्दाम आकांक्षा से प्रेरित है। वह खूंखार, आक्रामक और मदांध व्यक्ति को रचती है जो अपने भोग लिप्सा को पूरा करने के लिए कुछ भी कर सकता है। हत्या, बलात्कार, धर्म का पाखंड, हिंसा की घटनाएं, अमानवीयता, भ्रष्टाचार... सूची बहुत लंबी है। भागम-भाग और अंध दौड़ में आज का शिक्षित मनुष्य इस कदर मशगूल है कि बहुधा वह सही-गलत, उचित-अनुचित में भेद करने में भी स्वयं को असमर्थ पाता है। वह बस भागा जा रहा है, भागा जा रहा है।

आंतरिक खोखलापन, बेचैनी, नैतिकता का ह्रास, नानाविध सामाजिक कुरीतियों से युक्त जिस तरह का परिवेश आज सृजित हो गया है, उसके फलतः ऐसी शिक्षा की आवश्यकता महसूस की जा रही है जो वास्तविक अर्थों में विद्यार्थियों का चरित्र निर्माण कर सके, उन्हें मानसिक रूप से मजबूत बना सके, उनके आत्मबल में श्रीवृद्धि करे और उन्हें सफलतापूर्वक जीवन जीने की कला सिखाये।

अब सवाल यह है कि वास्तविक शिक्षा है क्या? इस परिप्रेक्ष्य में विवेकानंद के विचार महत्वपूर्ण हैं- "जिस शिक्षा से हम अपना जीवन निर्माण कर सकें, मनुष्य बन सकें, चरित्र गठन कर सकें और विचारों का सामंजस्य कर सकें, यथार्थ में वही वास्तविक शिक्षा है।"

कहा जाता है कि शिक्षा इंसान को ताकतवर बनाती है, ताकतवर को संवेदनशील बनाती है, संवेदनशीलता को नियंत्रित करना सिखाती है, इंसान को मानवीय बनाती है; और शिक्षा के इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु शिक्षा के जरिये मनुष्य में रचनात्मकता, दूरदर्शिता, जागरूकता, अवलोकन की सूक्ष्म दृष्टि, खोजी वृत्ति, सकारात्मक चिंतन की क्षमता, सामूहिक भाव, संवेदना आदि को विकसित करना अनिवार्य है।

रचनात्मक शिक्षा के इसी खोज के अंतर्गत रंगमंच और फिल्म (सकारात्मक फिल्म) की ओर एक बार नजर डालना जरूरी प्रतीत हो रहा है।

उद्देश्य-

इस अध्ययन का उद्देश्य रंगमंच और फिल्म की सकारात्मक क्षमताओं को समझते हुए शिक्षा के क्षेत्र में उसकी उपयोगिता को स्थापित करना है।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

महत्त्व-

फिल्म और रंगमंचीय गतिविधि को शिक्षा में शामिल करने से शिक्षा का फलक व्यापक होगा। दबाव के बगैर विद्यार्थियों को गंभीर विषयों पर विचार-विमर्श का मौका मिलेगा और उनके चिंतन-मनन की क्षमता में वृद्धि होगी। शिक्षक चुनिंदा अच्छी और स्तरीय गूढ फिल्मों और नाटकों के माध्यम से सहजता और सरलता के साथ महत्वपूर्ण विषयों पर विद्यार्थियों की दृष्टि को परखकर अपने मागदर्शन में उसे विस्तार दे सकेंगे। रंगमंचीय और फिल्मी शिक्षा विद्यार्थियों के व्यक्तित्व निर्माण में सहायक होगी।

प्रविधि- अंतर्वस्तु विश्लेषण।

विवेचना-

रंगमंच और फिल्मों में मौजूद रचनात्मकता, कल्पना की स्वच्छंद उड़ान तथा उसके उपयोगितावादी सिद्धांत के फलतः मनोरंजन के साथ-साथ उसमें समाहित ज्ञान, चेतना, जागरूकता के तत्व शिक्षा में उसके लिए एक स्थान तैयार करते हैं। किसी भी विषय, ज्ञान-विज्ञान के किसी भी क्षेत्र, जीवन के किसी भी पक्ष, दुनिया की किसी भी घटना, चर-अचर, लौकिक-अलौकिक आदि हर एक विषय को अपने दृश्य पटल पर निरूपित कर लेने की रंगमंचीय और फिल्मी क्षमता इन दोनों विधाओं को अद्वितीय ताकत देती है। यह भी एक कारण है जिसकी वजह से रंगमंच और फिल्मों के विषय काफी महत्वपूर्ण हो जाते हैं।

मूलतः दृश्य विधा होने के नाते इसका प्रभाव मानव मस्तिष्क पर चिरस्थायी होता है। शिक्षा के औपचारिक जटिल ढ़ाँचे से अलग इसके रसास्वादन के वक्त संप्रेषित ज्ञान सहजता के साथ दृष्टा में समझ का एक व्यापक धरातल तैयार कर सकता है।

यद्यपि रंगमंच से अलग फिल्म अपने नकारात्मक प्रभाव की दृष्टि से भी कुख्यात है और अक्सर मूल्यों की गिरावट के लिए उसे कोसा जाता है। फिल्मों की विकास यात्रा पर नजर डालें तो बहुत सी चीजे स्पष्ट होती हैं। फिल्मों के कथानक, प्रस्तुति के तरीके, तकनीकी का उपयोग आदि हर मोर्चों पर समय के साथ आमूल-चूल परिवर्तन महसूस किया जा सकता है। इसमें बाजारीकरण का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। बाजार ने फिल्म उद्योग को बेशक फायदा पहुँचाया है पर मुनाफा का ध्येय ही सब कुछ हो जाना फिल्मों की गुणवत्ता, उसके कथानक की गंभीरता और उसके सामाजिक जवाबदेही को बहुत बार क्षति पहुँचाता है; नतीजतन फिल्में आलोचनाओं की शिकार भी होती हैं।

अपने जन्म से अब तक फिल्मों ने बहुत से प्रतिमान तोड़े, बहुत से गढ़े। सिनेमा ने बहुत से महत्वपूर्ण विषयों पर समाज को रास्ता दिखाया, तो बहुत से विषयों पर गुमराह भी किया। श्लीलता,अश्लीलता, उचित-अनुचित, नैतिक-अनैतिक तमाम कथानक-दृश्यों की श्रृंखलाओं से गुजरते हुए, उनमें से बहुतों को साथ लेकर आज यह हमारे बीच मौजूद है।

यह सच है कि समाज के नैतिक पतन में फिल्मों की बड़ी भूमिका है। कमाई के अंध दौड़ में बहुत से फिल्म निर्माताओं ने समस्त मान-मर्यादाओं की धज्जियां उड़ाते हुए अतार्किक रूप से दर्शकों के सम्मुख यौनिकता, अश्लीलता को खूब परोसा है, परन्तु साथ ही साथ इसका एक पक्ष यह भी है कि कुछ फिल्मों में इस तरह के दृश्यों की प्रस्तुति अनिवार्य भी हो जाती है। यही एक वजह है कि प्रथम दृष्ट्या अश्लील कही जाने वाली बहुत सी फिल्मों पर अश्लीलता का मुहर लगाना कठिन हो जाता है। ऐसी फिल्मों के हर एक दृश्य पटकथा से इस कदर जुड़े और आवश्यक होते हैं कि उन्हें चाहकर भी गंदा नहीं कहा जा सकता। ऐसी फिल्में भी सोंचने पर विवश करती हैं और दकियानूस कहे जाने वाले मुद्दों पर विचार के लिए प्रेरित करती हैं।

कुछ भारतीय फिल्मों ने बाजारीकरण के दौर में भी काफी गंभीर और महत्वपूर्ण मुद्दों को चित्रपट पर उकेरा है। यथा- बैंडिट क्वीन, मातृभूमि, स्वदेश, ब्लैक, रंग दे बसंती, चक दे इंडिया, तारे जमीन पर, थैंक्स माँ, जोगवा, थ्री इडियट्स, पा, पीपली लाइव, आइ एम कलाम, माइ नेम इज खान, उड़ान, स्टेनली का डब्बा, चिल्लर पार्टी, इंग्लिश-विंग्लिश, शिप आफ थेसियस, ओ माइ गॉड, अंकुर अरोड़ा मर्डर केस, पाठशाला, पीके, पीकू, मसान, दृश्यम आदि।

यद्यपि ये समस्त फिल्में अनूठी हैं, परंतु यहाँ रचनात्मक शिक्षा के दृष्टिकोण से इनमें से कुछ चुनिंदा फिल्मों के विषय पर प्रकाश डाला जा रहा है-

स्वदेश फिल्म में कॅरियर की महत्वाकांक्षा और रिश्तों में कौन ज्यादा महत्वपूर्ण है, इस बात को स्थापित किया गया है। देश के लिए प्रेम भाव और जिम्मेदारी उठाने की प्रवृत्ति को इसमें बेहद प्रभावकारी ढ़ंग से चित्रित किया गया है। नासा की नौकरी छोड़कर एक युवा एक छोटे से गाँव की तस्वीर किस तरह बदलता है, इसे इस फिल्म में बख़ूबी दिखाया गया है।

रंग दे बसंती में भ्रष्टाचार और तंत्र के नकारापन के खिलाफ युवाओं के संघर्ष, मातृभूमि के प्रति प्रेम और देश के महापुरूषों की वीर गाथाओं को निरूपित किया गया है। यह युवा जोश, उमंग और कर्तव्यनिष्ठता को निरूपित करती अप्रतिम फिल्म है।

थ्री इडियट्स, तारे जमीन पर, इन दो फिल्मों में शिक्षा व्यवस्था पर प्रश्न चिह्न खड़ा किया गया है। शिक्षा में रचनात्मकता को शामिल करने की दृष्टि से ये दोनों फिल्में काफी महत्वपूर्ण हैं। दोनों फिल्में विद्यार्थियों के विश्वास को बढ़ाने और उन्हें जीवन में रचनात्मक बनने की प्रेरणा देती हैं।

अंकुर अरोड़ा मर्डर केस आज की युवा पीढ़ी के लिए एक सशक्त, नैतिक और साहसिक संदेश लेकर सामने आती है। कॅरियर की परवाह किये वगैर सच का साथ देने की हिम्मत, सिद्धांत को व्यवहार में उतारने के पीछे की कठिनाई और जीवन में वास्तविक खुशी क्या है, इस बात को यह फिल्म बखूबी दर्शाती है। सीधा, सरल और सपाट रास्ता छोड़कर दुश्वारियों से जूझते हुए कर्तव्य पथ पर बढ़ने के दर्दपूर्ण आनंद को यह फिल्म चित्रित करती है और दर्शकों को इसके लिए अभिप्रेरित करती है। इस फिल्म में संवेदनशीलता, कर्तव्य बनाम कॅरियर की सुरक्षा का द्वन्द है।

पीकू फिल्म एक कामकाजी युवा लड़की और उसके 70 साल के पिता की कथा है। वृद्धावस्था की विशेषताओं चिड़चिड़ापन, गुस्सा, हठ आदि को स्वीकार करते हुए अपने बुजुर्गों को समझने की अद्भुत क्षमता को इस फिल्म में दिखाया गया है। यह फिल्म जीवन में खुशी क्या हो सकती है, उसको लेकर एक आदर्श दृष्टिकोण स्थापित करती है। यह फिल्म प्राथमिकताओं को समझने की दृष्टि देती है।

हर दुर्घटना की कुछ पृष्ठभूमी होती है जिसे जाने बगैर उस दुर्घटना का विश्लेषण अनुचित है और उसके लिए किसी को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। अपराध हमेशा अपराध नहीं होता। सीधे-सीधे दिखने वाली हत्या भी ऐसी दुर्घटना हो सकती है जिसके लिए संबंधित व्यक्ति को रत्ती भर भी प्रताड़ित करना अपराध है। इस बात को बखूबी स्थापित करती है फिल्म दृश्यम। यह फिल्म एक परिवार के आपसी प्रेम, मुसीबत से जूझने की कोशिश और अभूतपूर्व तार्किक दिमागी कौशल को दिखाती है।

मसान आज की युवा पीढ़ी, उनके प्रेम संबंध, उनकी यौनिक इच्छाएं, उसकी पूर्ति के प्रयास में मिलने वाली विविध प्रकार की प्रताड़ना की बहुत ही संवेदनशील अभिव्यक्ति है। यह फिल्म बड़े महत्वपूर्ण और ज्वलंत प्रश्न खड़े करती है। क्या विवाह के बगैर एक बालिग लड़का-लड़की के बीच यौन संबंध का बनना इस कदर सामाजिक अपराध है कि उसकी कीमत उनमें से एक को अपनी जान देकर तथा दूसरे को जीवन भर का लांछन झेलते हुए चुकानी पड़े?

इन समस्त फिल्मों में कुछ न कुछ ऐसा है जो सोंचने पर विवश करता है। ये फिल्में जीवन के अनेक पक्षों को, उसकी खूबियों-खामियों को छूती हैं। ऐसा नहीं है कि इन समस्त फिल्मों में दिखायी जाने वाली बातें अंतिम हैं परंतु इसका अंतिम न होना ही इसकी सबसे बड़ी खूबी है। फिल्म कोई ज्ञान ग्रंथ नहीं होती; इस नाते उससे सहमति, असहमति दोनों के लिए बराबर जगह होती है और यह जगह ही देखने वाले में एक संतुलित दृष्टि पैदा कर सकती है, उसके नजरिये को परिपक्व बना सकती है और अन्ततोगत्वा उन्हें कलात्मक दृष्टिकोण से चिन्तन-मनन से जोड़ सकती है।

इसके अतिरिक्त देश में बहुत सी ऐसी फिल्में भी बनती हैं जो विशुद्ध रूप से एजुकेशनल-मोटिवेशनल फिल्में कही जा सकती हैं। ये फिल्में नॉन फिचर, शार्ट फिल्म, वृत्त चित्र के रूप में होती हैं। इन फिल्मों के जरिये भी रचनात्मक रूप से ज्ञान-विज्ञान से विद्यार्थियों को जोड़ा जा सकता है।

फिल्मों के जरिये सीखने-सिखाने के पक्ष में सबसे बड़ा तर्क यह है कि फिल्म देखते वक्त ध्यान के केंद्रीकरण हेतु कोई अतिरिक्त प्रयास नहीं करना होता। मनोरंजन केंद्र में होने के कारण गूढ़ से गूढ़ बातें भी मानस में गहराई से पैठ जाती हैं, इसके अतिरिक्त दृश्यों के जरिये संप्रेषित बात शब्दों के जरिये कही गई बातों से ज्यादा चिरस्थायी रूप से मन-मानस तक पहुँचती हैं।

रंगमंच-

नाटक से मनोरंजन के साथ जीवन की सम्यक अभिव्यक्ति संभव मानी गयी है। पंडित सीताराम चतुर्वेदी ने बच्चों के नाटकों का मुख्य उद्देश्य जीवन के अनुकूल आचरण सीखाना, साथ ही मानव स्वभाव और मानव चरित्र का अध्ययन करना, भावों को व्यक्त करना, सम्यक रीति से उच्चारण करना, बोलना और अभिनय सिखाना माना है; किंतु नाटकों का एक प्रमुख उद्देश्य मनोरंजन करना भी है। पीटर स्लेड का मत है- नाटक का अर्थ है क्रिया और संघर्ष। यह बहुत बड़ी क्रिया है। जहाँ कही भी जीवन है, वहाँ यह कभी नहीं रुकती। इसका मानसिक स्वास्थ्य से आंतरिक संबंध होता है। यह जीवन जीने

RRIJM 2015, All Rights Reserved

की कला है। यह तभी कार्य करती है जब भावात्मक पक्ष वास्तविकता के साथ अनुकूल रूप में होता है। नाटक की सबसे बड़ी विशेषता है कि इसमें बच्चे करके सीखते हैं।

रंगमंच में सिर्फ अभिनय नहीं है। इसमें और भी बहुत कुछ शामिल है। भरत मुनि ने कहा है-

"न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।
न सौ योगो न तत्कर्म नाट्येऽस्मिन यन्नदृश्यते।।"

शिक्षा के क्षेत्र में रंगमंच निम्न कारणों से उपयोगी सिद्ध् हो सकता है-

- रंगमंच ज्ञान की प्राप्ति और निर्माण का एक सशक्त माध्यम है। लगातार रंगमंचीय गतिविधियों से विद्यार्थियों को सहजता के साथ स्वयं और अपने आस-पास की दुनिया, जिसमें वे रहते हैं और विमर्शों के बारे में जानकारी मिलती है।
- रंगमंचीय गतिविधि छात्र-छात्राओं को फिजिकली, मेंटली और इमोशनली मजबूत बनाती है।
- बच्चों के लिए सीखने की प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण हिस्सा जीवन के विविध क्षणों को अनुभव करना है। बच्चों को ऐसे सिचुएशन की जरूरत होती है जहाँ वे सोच सकें, महसूस कर सकें और कुछ कर और बोल सकें। रंगमंच इस दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण है।
- रंगमंच छात्र-छात्राओं को अपनी क्षमता से अवगत कराता है और उसके विकास, बढ़ोत्तरी में सहायता देता है।
- रंगमंच छात्र-छात्राओं के विषय, जिसको वे पढ़ते हैं और स्वयं उनमें, उसकी महत्ता और अंतर्संबंधों में भी संबंध स्थापित करता है।
- रंगमंच एक ऐसी विधा है जो बहुत सी कला विधाओं का समन्वय है। इसके अध्ययन और अभ्यास से कई विधाओं का ज्ञान फैलता है।
- रंगमंच की प्रक्रिया छात्र-छात्राओं को सवाल पैदा करने, उसका जवाब ढूढ़ने, निर्णय लेने, चुनौतियों का सामना करने, समस्या का समाधान करने और स्वावलंबी होने के लिए अभिप्रेरित करती है।
- यह छात्र-छात्राओं को सांस्कृतिक इतिहास, रीति-रिवाज, परंपरा, जीवन दर्शन आदि से अवगत कराती है।
- मनोवैज्ञानिकों और समाजशास्त्रियों के अनुसार बच्चों के सर्वांगीण विकास में रंगमंच का बहुत बड़ा योगदान होता है। यही वह माध्यम है जिसके द्वारा बच्चा एक बड़े समुदाय के साथ जुड़ सकता है। जन सामान्य के सामने अपने को प्रस्तुत करने की उसकी झिझक दूर होती है और उसकी वाक् शक्ति का विकास होता है। उसके अंदर समूह में कार्य करने के साथ ही नेतृत्व की क्षमता भी विकसित होती है।
- इस माध्यम से बच्चों में कल्पना शक्ति, वाक् शक्ति, अनुभूति शक्ति, अभिव्यक्ति की क्षमता, नेतृत्व क्षमता, व्यक्तिगत कौशल व व्यक्तित्व का बहुमुखी विकास होता है। रंगमंच बच्चों को जिम्मेदार बनाता है। उनमें अनुशासन के साथ समयबद्धता के गुण लाता है।
- रंगमंचीय शिक्षा के जरिये छात्र-छात्राओं को ज्यादा रचनात्मक, कल्पनाशील, मानसिक और शारीरिक तौर पर सशक्त और जीवन में विपरित परिस्थितियों से जूझने की क्षमता से लैस किया जा सकता है।
- रंगमंचीय शिक्षा के जरिये उनको इस बात के लिए तैयार किया जा सकता है कि वे अपने जीवन की वास्तविक समस्याओं को चिन्हित कर उसका समाधान ढूढ़ सकें।
- रंगमंचीय शिक्षा के जरिये विद्यार्थियों में सुनना और सुनाना, ये दोनो ही क्षमताएं विकसित की जा सकती हैं।
- रंगमंचीय शिक्षा के जरिये देश के लिए ऐसे नागरिक तैयार किये जा सकते हैं जो रचनात्मक सोच वाले (क्रिएटिव थिंकर) हों; जिनके पास संतुलित नालेज और स्किल हो और वे कार्यों को करने के विश्वास से लबरेज हों।

बहुत से नाटक ऐसे हैं जो बेहद गूढ़ दार्शनिक विषयों को सरलता के साथ प्रस्तुत करते हैं। इस दृष्टि से अंधायुग, ययाति, हयवदन नाटक काफी महत्वपूर्ण है। संपूर्णता की अंतहीन तलाश की असह्य यातनापूर्ण परिणति तथा बुद्धि और देह के सनातन महत्ता, संघर्ष के परिणाम का प्रश्न है गिरीश कर्नाड का हयवदन। यह नाटक मानव जीवन के बुनियादी अन्तर्विरोधो, संकटों और दबावों-तनावों को अत्यन्त नाटकीय और कल्पनाशील रूप में अभिव्यक्त करता है। ऐसे ही अन्धा युग में मिथकीय कथानक के माध्यम से आधुनिक युग के युद्ध और विनाशी फितरत को प्रकट किया गया है। गिरीश कर्नाड के नाटक ययाति को आज के राजनीतिक संदर्भ से जोड़कर देखा

जा सकता है। वर्तमान समय में सत्ता सुख भोगने के लिये जिस प्रकार सत्ता को अपने ही वंश में स्थानान्तरित करने की परम्परा चल रही है, वह सब प्रतीक रूप में ययाति में तलाशा जा सकता है। रंगमंचीय शिक्षा की दृष्टि से ये सब नाटक काफी महत्वपूर्ण हैं। नाटकों की एक ऐसी बड़ी सूची कभी भी ढूढ़ी जा सकती है जो हर उम्र के विद्यार्थी को रचनात्मक रूप से विविध विषयों पर आसानी से शिक्षित कर, उनके सोचने-समझने की क्षमता को विस्तार दे सकती है।

हम सिनेमाहॉल में यह सोचकर जाते हैं कि हमारे तीन घण्टे मस्ती में बीतेंगे। नाच-गाना, ऐक्शन, कॉमेडी आदि के साथ पूरा मनोरंजन होगा; और जब हम वापस आते हैं तो हमें इस बात की संतुष्टि होती है कि हमारा कुछ समय अच्छा कटा और हमारा दिमाग फ्रेश हो गया। लेकिन ऐसा करते वक्त कुछ बार ऐसा भी होता है कि हमें उपर्युक्त चीजों से ज्यादा बहुत कुछ मिल जाता है और हम मनोरंजन के साथ कुछ महत्वपूर्ण जानकारियां लेकर सिनेमा हॉल या रंग मंडप से बाहर आते हैं। बहुत बार फिल्म, नाटक देखने के बाद हम सोचने पर विवश हो जाते हैं, कुछ महत्वपूर्ण मसलों पर कुछ करने-धरने, सोंचने-समझने कीभावना मन में जाग्रत हो जाती है, बहुत बार हमारी संवदेना जाग उठती है, मन में कर्तव्य बोध पैदा हो जाता है, हमारी सोच बदल जाती है और कुछ अमिट प्रभाव हमारे मानस पर स्थापित हो जाता है। यद्यपि नाटक की तुलना में फिल्में बहुधा काल्पनिक होती हैं, परंतु फिल्म की कल्पना का भी जीवन से बहुत बार बेहद गहरा संबंध बन पड़ता है। फिल्मों में समाहित यह सत्य ही ऐसी फिल्मों को रचनात्मक शिक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण साबित करता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि रंगमंच और सिनेमा शिक्षा की गुणवत्ता में अभिवृद्धि हेतु और उसके प्रभाव को बढ़ाने में एक प्रभावी साधन बन सकती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

- रंगाचार्य, आद्य. (1974), भारतीय रंगमंच. नई दिल्ली : नेशनल बुक ट्रस्ट।
- भारती, धर्मवीर. (1983), अंधायुग. किताब महल : इलाहाबाद।
- कर्नाड, गिरीश. (2008), ययाति. राधाकृष्ण प्रकाशन : नई दिल्ली।
- देवसरे, हरिकृष्ण. बच्चों के सौ नाटक. नई दिल्ली : शकुन प्रकाशन।
- भारद्वाज, विनोद. (2006), सिनेमा, कल आज और कल. दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
- पारख, जवारीमल्ल. (2006), हिंदी सिनेमा का समाजशास्त्र. दिल्ली : ग्रंथ शिल्पी।
- सिन्हा, प्रसून. (2006), भारतीय सिनेमा. दिल्ली : श्री नटराज प्रकाशन।

फ़िल्म-

- बैंडिट क्वीन
- मातृभूमि
- स्वदेश
- ब्लैक
- रंग दे बसंती
- चक दे इंडिया
- तारे जमीन पर
- थैंक्स माँ
- थ्री इडियट्स
- पा
- ओ माइ गॉड
- अंकुर अरोड़ा मर्डर केस
- पीकू, मसान, दृश्यम आदि।